चरवाहा

१

धूप से झुलसी भूरी स्तेपी से सोलह दिनो से लू चल रही थी।

जमीन जलकर कोयला बन गयी, घास पीली पड गयी, राजमार्ग के किनारे बने कुए सूख गये, अनाज की बालिया पूरी खुलने से पहले ही मुरझाकर बूढो की तरह झुक गयी।

दोपहर को ऊघते गाव मे घटे की टन-टन गूजने लगी।

कडकती धूप और नीरवता का राज्य था। बस धूल उडाते कदमो की आहट, ऊबड-खाबड सडक पर सभल-सभलकर चलते बूढो की लाठियो की ठक-ठक सुनायी पड रही थी।

घटा गाववालो को सभा का बुलावा दे रहा था। सभा मे चरवाहे की नियुक्ति के सवाल को हल करना था।

कार्यकारिणी समिति मे लोग मक्खियो की तरह भिनभिना रहे थे, तबाकू का धुआ भरा था।

अध्यक्ष पेसिल के टुकडे से मेज को ठकठकाकर बोला

"नागरिको! पुराने चरवाहे ने हमारे ढोर चराने मे इकार कर दिया, कहता है कि तनखा कम है। हम, कार्यकारिणीवाले, ग्रिगोरी फ्रोलोव को इस काम पर रखने की सिफारिश करते है। यही पैदा हुआ, अनाथ है, कोम्सोमोल का सदस्य है बाप उसका, जैसा कि सब जानते है, मोची था। वह बहन के साथ रहता है, पेट भरने को उनके पास कुछ है नही। मेरे खयाल मे आप लोग उसकी हालत पर रहम करके उसे ढोर चराने का काम दे दोगे।"

बुड्ढे नेस्तेरोव से चुप न रहा गया, चुलबुलाकर वह बोला

"हम यह नही कर सकते झुड बडा है, और वह भी कोई चरवाहा है! दूर ले जाकर चराना है क्योकि आस-पास चारा है नही और उसे यह काम आता नही। पतझड तक आधे बछडे भी नही बचेगे"

इग्नात चक्कीवाला, घाघ बुड्ढा, विद्वेषपूर्ण स्वर में शक्कर घोलकर बोला :

"चरवाहा हम कार्यकारिणी के बिना भी ढूंढ़ लेंगे, यह हमारा अपना मामला है... और आदमी हमें ऐसा चुनना चाहिये जो बूढ़ा, भरोसेमंद हो, ढोरों की देखभाल करना जानता हो..."

"ठीक कहा, दादा..."

"अगर बुड्ढे को रखोगे तो और भी जल्दी बछड़ों से हाथ धो बैठोगे... अब वह ज़माना नहीं रहा, सब जगह चोर-उचक्कों की कोई कमी नहीं..." अध्यक्ष दृढ़ता के साथ बोला। पीछे से लोगों ने उसका समर्थन किया :

"बुड्ढे से काम नहीं चलेगा... यह भी ध्यान में रखो कि ये गायें नहीं बल्कि जवान बछड़े हैं। कुत्ते की तरह फुर्तीली टांगों की ज़रूरत है उन्हें चराने के लिये। झुंड बिदक गया, तो बुड्ढा दौड़ते हुए अपनी बत्तीसी खो बैठेगा..."

ठहाके गूंज उठे, पर बुड्ढा इग्नात अपनी बात मनवाने के लिये दबे स्वर मे बोला :

"कम्युनिस्टों का यहां कोई काम नहीं... यह काम तो पूजा-पाठ के साथ किया जाता है, ऐसे-वैसे नहीं..." और खूसट बुड्ढे ने अपनी टांट पर हाथ फेरा।

पर अध्यक्ष फ़ौरन सख़्ती से बोला :

"इस तरह की बातें नहीं चलेंगी .. इस तरह की... ऐसी बातों के लिये... सभा से बाहर निकाल दूंगा..."

प्रातः, जब चिमनियों से मैली रुई के चिथड़ों की तरह निकलकर धुआं चौक में फैलकर छाने लगता है, ग्रिगोरी ने डेढ़ सौ ढोरों का झुंड जमा किया और गांव की गलियों से हांककर सलेटी, मनहूस टीले की ओर चल पड़ा।

स्तेपी भूरी फुंसियों की तरह मारमोटों के बिलों से ढकी थी, मारमोट चौकन्ने होकर सीटियां-सी बजा रहे थे; घाटियों की नीची घास में दुबके हुकना पक्षी अपने रुपहले डैने चमकाते हुए फुर्र से उड़ रहे थे।

झुंड शांति से जा रहा था। झुर्रीदार पपड़ी से ढकी जमीन पर बछड़ों के खुर बारिश की तरह टप-टप कर रहे थे।

ग्रिगोरी के साथ उसकी बहन दून्या मददगार की हैसियत मे जा रही थी। उसका अंग-अंग – धूप से सावले गाल, आंखें, होंठ – सब हंस रहे थे, उसे सत्रहवां साल लगा था और सत्रह साल की उम्र में तो बात-बात पर हंसी आती है. भाई के फूले मुंह और लम्बे कानों-वाले बछड़ों को देखकर, जो जंगली घास चबाते चल रहे थे, उसे हंसी आ रही थी, इस बात तक पर हंसी आ रही थी कि दो दिन से उन्हें रोटी का एक टुकड़ा तक नसीब नही हुआ।

पर ग्रिगोरी नही हंस रहा था। फटी-पुरानी टोपी के नीचे से ग्रिगोरी का झुर्रियों से ढका चौड़ा माथा दिखायी पड़ रहा था, आंखों मे थकान की झलक थी, मानो वह उन्नीस बरस का नही बल्कि बूढ़ा हो चला हो।

चित्तीदार लहरों की तरह उमडता झुंड रास्ते के किनारे-किनारे चला जा रहा था।

ग्रिगोरी ने पीछे छूटे बछड़ो को सीटी बजाकर उकसाया और दून्या की ओर मुडकर बोला

"पतझड़ तक, दून्या अनाज कमा लेंगे और फिर शहर चले जायेंगे। मैं मज़दूर फैकल्टी मे भरती हो जाऊंगा और तेरे लिये भी कोई प्रबंध कर दूगा .. शायद किसी कोर्स-वोर्स में दाखिला दिलवा दूगा .. शहर मे, दून्या, बहुत किताबें होती हैं और रोटी भी वहां साफ़ होती है यहां की तरह घास-फूस मिली नही।"

"पर पैसे कहा से लायेंगे... शहर जाने के लिये?"

"तू भी बड़ी भोंदू है .. हमें बीस पूद* गेहू मिलेगा, क्या यह पैसे नही हैं... पूरे रूबल के हिसाब से एक-एक पूद बेच देंगे, फिर बाजरा और उपले भी बेच देंगे।"

ग्रिगोरी रुककर चाबुक की मूठ से सड़क की धूल पर हिसाब-किताब करने लगा।

"ग्रिगोरी, हम खायेंगे क्या? रोटी बिलकुल नही है..."

"मेरे झोले में पुए का सूखा टुकड़ा बचा है।"

* पूद – पुराना रूसी तौल जो १६ किलोग्राम के बराबर होता था। – अनु०

“आज तो खा लेंगे पर कल क्या करेंगे?”

“कल गांव से हमारे लिये आटा आ जायेगा... अध्यक्ष ने वायदा किया है...”

दोपहर का सूरज आग बरसा रहा था। ग्रिगोरी की टाट से बनी क़मीज़ पसीने से तर होकर उसके मोढ़ों से चिपक गयी।

ढोरों का झुंड बेचैनी से चला जा रहा था, डांस-मक्खियां बछड़ों को काट रही थीं, तपी हवा ढोरों के रंभाने और डांसों के भिनभिनाने से गूंज रही थी।

शाम को सूर्यास्त से पहले वे बाड़े के पास पहुंच गये। पास ही में जोहड़ था और बारिशों के कारण गले फूस की कुटिया थी।

ग्रिगोरी दौड़कर आगे गया और हांफते हुए उसने बाड़े का टहनियों से बना फाटक खोल दिया।

वह बछड़ों को गिनता हुआ एक-एक करके फाटक के काले चौकोर के भीतर हांक रहा था।

२

जोहड़ के पास के टीले पर उन्होंने नयी कुटिया बनायी। दीवारो पर गोबर लीपा और ग्रिगोरी ने फूस का छप्पर डाल दिया।

अगले दिन अध्यक्ष घोड़े पर सवार होकर आया। वह आधा पूद मकई का आटा और एक झोला बाजरा लाया।

छांव में बैठकर उसने सिगरेट सुलगायी और बोला:

“लड़का तू भला है, ग्रिगोरी। बस, किसी तरह झुंड की रखवाली कर ले, पतझड़ में हम क्षेत्रीय केन्द्र चलेंगे। वहां से शायद तुझे पढ़ने के लिये भिजवाने का प्रबंध हो जाये... वहां लोक शिक्षा विभाग में मेरी जान पहचान का एक आदमी है, वह मदद कर देगा...”

ग्रिगोरी का चेहरा खुशी से चमक उठा। विदा करते समय उसने अध्यक्ष को घोड़े पर चढ़ने में मदद दी और कसकर हाथ मिलाया। बड़ी देर तक वह घोड़े के खुरों से उड़ती धूल के गुबार को देखता रहा।

प्रातःकालीन बयार से कुछ राहत पाने के बाद दोपहर को सूखी

स्तेपी का तपती गर्मी से दम घुटने लगता। पीठ के बल लेटकर ग्रिगोरी नीली-सी धुंध से ढके टीले को देखता, उसे लगता कि स्तेपी एक जीवधारी के समान है और वह गांवों, क़स्बों और शहरों के भारी बोझ से कष्ट झेल रही है। लगता कि धरती की छाती सांस लेते हुए निरंतर हिल रही है, और कहीं नीचे, भूगर्भ में कोई अज्ञात जीवन पूरी गति से चल रहा है।

और दिन के उजाले में भी उसका दिल दहल जाता।

नज़रों से टीलों की अपार शृंखला को नापता, उन पर छायी धुंध, कत्थई घास पर फैले झुंड को देखता और सोचता कि वह इस दुनिया से कटकर कही दूर चला गया है।

शनिवार की शाम को ग्रिगोरी ने ढोरों को बाड़े में बंद किया। दून्या कुटिया के पास आग जलाकर बाजरे और खुशबूदार जंगली साग की खिचड़ी बना रही थी।

ग्रिगोरी आग के पास बैठ गया और सौंधी गंध छोड़ते उपलों को चाबुक की मूठ से कुरेदकर बोला:

"ग्रीशा की बछिया बीमार पड़ गयी। मालिक को इसकी खबर पहुचवानी चाहिये।"

"मैं जाऊ गाव को?" दून्या ने कृत्रिम उदासीनता से पूछा।

"जरूरत नहीं है। अकेला झुड को नही संभाल पाऊंगा..." मुस्कराकर पूछा: "क्या लोगों से मिलने को जी कर रहा है?"

"हां, ग्रिगोरी भइया... एक महीने से स्तेपी में रह रहे हैं, बस एक बार किसी आदमी के दर्शन हुए। अगर पूरी गर्मी हमने यही बिता दी तो बोलना ही भूल जायेंगे .."

"सब्र कर, दून्या . पतझड़ में शहर चले जायेंगे। हम दोनों पढ़ेंगे और पढ़ाई पूरी करके यहा लौटेंगे। विज्ञान जैसे कहता है वैसे खेती करना शुरू करेंगे, नही तो यहां कितना अंधेरा है, लोग सोये-से पड़े हैं सब अनपढ है . किताबें नहीं है.. "

"हमें भरती नही करेंगे . हम भी तो अनपढ़ हैं.. "

"हमें ले लेंगे। सर्दियो में जब मैं कस्बे में गया था, मैंने कोम्सोमोल इकाई के सचिव के यहां लेनिन की किताब पढ़ी थी। उसमें कहा गया है कि सत्ता सर्वहारा की है, और पढ़ाई के बारे में भी लिखा है कि उनको पढ़ना चाहिये जो ग़रीबो की संतान हैं।"

ग्रिगोरी घुटनों के बल उचका, उसके गालों पर लपटों का लाल प्रकाश चमका।

"हमें पढ़ना चाहिये ताकि अपने जनतंत्र का काम चलाना सीख सकें। शहरों में तो सत्ता मज़दूरों के हाथों में है, पर हमारे यहां क़स्बे का अध्यक्ष कुलक है और गांवों में भी अमीर लोग अध्यक्ष बन बैठे हैं..."

"ग्रिगोरी, मैं कपड़े धोकर, महरी का काम करके कमाऊंगी और तुम पढ़ना..."

उपले धुआं छोड़ते, फुफकारते सुलग रहे थे। स्तेपी ऊंघती मौन पडी थी।

३

क्षेत्रीय केन्द्र जानेवाले मिलीशियामैन के हाथ कोम्सोमोल इकाई के सचिव पोलीतोव ने ग्रिगोरी को क़स्बे आने का बुलावा भेजा था।

ग्रिगोरी पौ फटने से पहले ही रवाना हो गया और दोपहर को टीले से उसे गिरजाघर का घंटा और पुआल व टीन की छतोंवाले मकान दिखायी पड़े।

बिवाइयों से भरे पैरों को घसीटता हुआ वह चौक पर पहुंचा।

क्लब पादरी के घर में था। ताज़ी पुआल की सुगंध छोड़ती नयी चटाइयों पर चलकर उसने बड़े कमरे में प्रवेश किया।

खिड़कियों के पट बंद होने के कारण कमरे में धुधला-सा प्रकाश था। खिड़की के पास पोलीतोव रंदा चला रहा था – चौखट बना रहा था।

"सुना है मैंने, भाई, सुना है..." मुस्कराकर अपना पसीजा हाथ बढाकर वह बोला। "चलो और क्या कर सकते हैं! मैंने क्षेत्रीय केन्द्र से पता करवाया था: वहां तेल पेरने की फ़ैक्टरी में जवान लड़कों की ज़रूरत थी, पता चला कि उन्होंने ज़रूरत से ज़्यादा बारह लोगों को भरती कर लिया... अभी झुंड की रखवाली कर लो और पतझड़ में तुम्हें पढ़ने के लिये भेज देंगे।"

"ग़नीमत है कि यह काम ही मिल गया... गांव के कुलक मुझे

क़तई भी चरवाहे का काम नहीं सौंपना चाहते थे ... कहते थे कोम्सोमोल का है, अधर्मी, पूजा-पाठ के बिना चरायेगा .. " ग्रिगोरी ने थकान भरी हंसी के साथ बताया।

पोलीतोव आस्तीन मे बुरादे को हटाकर खिड़की के दासे पर बैठ गया। पसीने से भीगी भौंहों को सिकोड़कर वह ग्रिगोरी को निहारने लगा।

"ग्रिगोरी, तुम बहुत दुबले हो गये . . राशन-पानी का क्या हाल है तुम्हारे पास ?"

"पेट भरने को है।"

दोनों चुप हो गये।

"चलो, मेरे यहा चलें। तुम्हे कुछ पढ़ने को दूंगा : क्षेत्रीय केन्द्र से अखबार और किताबें मिली हैं।"

वे क़ब्रिस्तान से सटी सड़क पर जा रहे थे। राख के सलेटी ढेरों मे मुर्गियां नहा रही थी, कही ढेकली चरमरा रही थी और बस कानों में सन्नाटा गूंज रहा था।

"तुम आज यही रुक जाना। सभा होगी। लड़के तुम्हारे बारे में पूछ रहे थे कि ग्रिगोरी कहां है, क्या हाल-चाल हैं उसके ? उनसे भी मिल लोगे . आज मैं अंतर्राष्ट्रीय स्थिति के बारे में व्याख्यान दूंगा... रात को मेरे यहा सोना और कल चले जाना। ठीक है ?"

"मैं रात को नहीं ठहर सकता। दून्या अकेली झुंड को नही संभाल पायेगी। सभा में जाऊंगा और जैसे ही ख़त्म होगी रात को ही चला जाऊंगा।"

पोलीतोव की ड्योढ़ी में ठंडक थी।

सूखे सेबों की मीठी सुगंध और दीवारो पर टंगे जुओं और रासों से घोड़े के पसीने की बू आ रही थी।

कोने में – क्वास * से भरी लकड़ी की बालटी और पास ही में टेढ़ी चारपाई थी।

"यह रहा मेरा कोना : अंदर कमरे में गर्मी है ..."

पोलीतोव ने झुककर तिरपाल के नीचे से सावधानी के साथ

* रई नामक अनाज की डबलरोटी से बना पेय। – स०

'प्राव्दा' के पुराने अक और दो पुस्तिकाये निकाली।

उन्हे ग्रिगोरी को थमाकर उसने पैबद लगी बोरी का मुह खोला और बोला

"पकडो "

ग्रिगोरी बोरी का सिरा पकडे हुए था पर आखे अखबार की पक्तियो पर फिसल रही थी।

पोलीतोव मुट्ठी भर-भर कर आटा डाल रहा था। आधी भरी बोरी को ठसका देकर वह दौडा-दौडा कमरे मे गया।

बैकफैट के दो टुकडे लाया, बद गोभी के सूखे पत्ते मे लपेटकर उन्हे बोरी मे रख दिया और बुदबुदाया

"घर जाओगे तो यह लेते जाना!"

"नही, मै यह नही लूगा " ग्रिगोरी भडक उठा।

"कैसे नही लोगे?"

"कह दिया न लूगा "

"बौडम कही का!" पोलीतोव ग्रिगोरी पर नजरे गडाकर चिल्लाया। उसका चेहरा सफेद पड गया। "कहने को तो साथी कहलाता है! भूखा मर जायेगा पर चू नही करेगा। ले ले नही तो दोस्ती खतम आज से "

"मै तुम्हारे मुह का कौर नही छीनना चाहता "

"मुह का कौर छिने दुश्मनो का बाते " पोलीतोव ग्रिगोरी को गुस्से मे बोरी का मुह बाधते देखकर कुछ नर्म स्वर मे बोला।

सभा पौ फटने से कुछ पहले ही समाप्त हुई।

ग्रिगोरी स्तेपी मे चला जा रहा था। कधे पर आटे की बोरी का बोझ था, छिले पावो मे जलन हो रही थी पर वह प्रभात की लालिमा की ओर उत्साह और उमग के साथ कदम बढाता चल रहा था।

४

सुबह दून्या आग जलाने के लिये सूखा गोबर बीनने के लिये कुटिया से निकली। ग्रिगोरी ब्राड की ओर से सरपट दौडा आ रहा था। दून्या का माथा ठनका।

20 C·m
Sh 28 3325
D-423
5.71 P

"क्या कुछ हो गया?"

"ग्रीशा की बछिया मर गयी ... और तीन ढोर बीमार पड़ गये।" दम लेकर बोला: "दून्या, जा गांव। ग्रीशा और बाक़ी लोगों को कह दे कि आज ही आ जायें ... ढोरों को बीमारी लग गयी है।"

जल्दी से सिर पर रूमाल बांधकर टीले के पीछे से उगते सूरज की ओर पीठ करके दून्या टेकरी के रास्ते चल पड़ी।

उसको विदा करके ग्रिगोरी धीरे-धीरे बाड़े की ओर चल पड़ा।

झुंड घाटी में चला गया था और बाड़ के पास तीन बछड़े पड़े थे। दोपहर को तीनो मर गये।

ग्रिगोरी पागलों की तरह झुंड और बाड़े के बीच दौड़ रहा था: और दो बछड़े बीमार पड़ गये ...

एक बछिया जोहड़ के पास कीचड़ में गिर गयी; ग्रिगोरी की ओर मुड़कर करुण स्वर में रंभाने लगी; सूजी आंखों मे आंसू भरे थे, उधर ग्रिगोरी के धूप से सावले गालो पर खारे आसू टप-टप बह रहे थे।

सांझ ढलने पर दून्या मालिकों के साथ लौटी। ...

वृद्ध अर्तेमिच निर्जीव बछिया को लाठी मे छूकर बोला.

"छूत की बीमारी है यह.. अब सारा झुंड बीमार हो जायेगा।"

खाल उतारकर लोथें उन्होंने जोहड़ से कुछ दूर गाड़ दीं। सूखी काली मिट्टी से छोटा-सा टीला बना दिया।

और अगले दिन फिर दून्या को गांव जाना पड़ा। एक साथ सात बछड़े बीमार पड़ गये।..

काले दिनो का तांता लग गया। बाड़ा सूना हो गया। ग्रिगोरी के मन में भी सूनापन छा गया। डेढ़ सौ डंगरों में से पचास बचे थे। छकड़ों पर मालिक आते, मरे बछड़ो की खाल उतारते, घाटी में उथले गड्ढे खोदते, खून में लथपथ लोथें मिट्टी से ढककर चले जाते। झुंड अनिच्छा के साथ बाड़े मे जाता, बछड़े खून और उनके बीच रेंगती अदृश्य मौत की अनुभूति से चीख-चीखकर रंभाते।

तड़के, जब सूखकर पीला पड़ा ग्रिगोरी बाड़े का चरमराता फाटक खोलता, झुड चरने के लिये जाते समय क़ब्रों के सूखे टीलों के बीच से होकर जाता।

सड़ते मांस की दुर्गंध, बेचैन ढोरों के खुरों से उड़ती धूल, उनका

असहाय क्रंदन छा जाता, और तपता सूरज धीरे-धीरे स्तेपी पार अपने अभियान पर चल पड़ता।

गांव से शिकारी आये। बाड़ के चारों ओर उन्होंने गोलियां चलायीं: भयंकर बीमारी को डराने के लिये। पर बछडे मरते ही जा रहे थे और हर दिन के साथ झुंड घटता ही जा रहा था।

ग्रिगोरी ने ध्यान दिया कि कहीं-कहीं क़ब्रें खुली हुई हैं, पास ही में चबी हड्डियां पड़ी हैं। रात को बछड़े बेचैन रहते, डरपोक हो गये थे।

रात की नीरवता में अचानक वहशी चीत्कार सुनायी पड़ता और झुंड बाड़ को तोड़ता बाड़े में दौड़ने लगता।

बछड़ों ने टहनियों से बनी बाड़ों को गिरा दिया, झुंड बनाकर कुटिया के पास आ जाते। आग के पास आहें छोड़ते, घास की जुगाली करते सो जाते।

ग्रिगोरी कुछ समझ नहीं पा रहा था। एक बार उसकी नींद कुत्ते के भौंकने से टूटी। उसने चलते-चलते भेड़ की खाल का ओवरकोट पहना और झट से कुटिया के बाहर आया। वह बछड़ों की, ओस मे भीगी बग़लों से टकराया।

दरवाज़े के पास कुछ देर खड़े-खड़े उसने कुत्तों के लिये मीटी बजायी और उत्तर में उसे गद्यूची घाटी मे भेड़ियों का लम्बा समवेत चीत्कार सुनायी पड़ा। टीले गिर्द उगी झाड़ियों से एक और हुंकारा ...

कुटिया में घुसकर उसने दीया जलाया।

"दून्या, सुन रही है?"

प्रातः तारों के साथ ये आवाज़ें भी बुझ गयीं।

५

सवेरे इग्नात चक्कीवाला और मिखेई नेस्तेरोव आये। ग्रिगोरी कुटिया में बैठा चप्पलों की मरम्मत कर रहा था। बूढ़े अंदर आये। बूढ़े इग्नात ने टोपी उतारी, कुटिया के कच्चे फ़र्श पर पड़ती सूर्य की तिरछी किरणों की चमक से आंखें मिचमिचायीं और हाथ उठाया — वह कोने में लटकी, लेनिन की छोटी-सी तस्वीर के सामने सलीब का

निशान बनाना चाहता था। ध्यान से देखकर उसने अपना हाथ झट से जेब में ठूंस लिया। गुस्से में थूककर बोला:

"यह बात है... देव-प्रतिमा मतलब तेरे पास नही है? .."

"नही है..."

"उसके स्थान पर यह किसकी तस्वीर लटकी है?"

"लेनिन की।"

"तो यही वजह है हमारी मुसीबतों की.. भगवान यहां नही हैं इसीलिये बीमारी झट से आन पड़ी... इसी वजह से तो बछड़े मर गये .. ओहो-हो, हमारे महाराजाधिराज..."

"दादा, बछड़े इसलिये मरे कि ढोरों के डाक्टर को नही बुलवाया।"

"पहले तुम्हारे डागडरों के बिना ही रहते थे .. बहुत अक़लमंद बनता है तू... पूजा-पाठ वग़ैरह करता तो ढोरों के डागडर की कोई जरूरत न पड़ती।"

मिख़ेई नेस्तेरोव नज़रें घुमाकर चिल्लाया:

"उतार दे यहां से इस अधर्मी की तस्वीर! . तेरी वजह से, पापी, झुंड मर गया।"

ग्रिगोरी का चेहरा हल्का-सा सफ़ेद पड गया।

"अपने घर चलाना हुक्म . . गला फाड़ने की ज़रूरत नही... यह सर्वहारा के नेता है..."

मिख़ेई नेस्तेरोव को ताव आ गया, वह तमतमाकर चिल्लाया:

"हमारा खाता है—हमारी तरह ही कर .. जानते है हम तुम जैसों को . देखते रहना, नही तो जल्दी ही अक्ल ठिकाने लगा देंगे।"

उन्होने बाहर निकलकर टोपी पहनी और बिना कुछ कहे चले गये।

दून्या सहमी-सहमी भाई का मुंह ताकती रह गयी।

एक दिन बाद तीख़ोन लोहार गांव से आया, अपनी बछिया को देखने के लिये।

कुटिया के पास उकड़ूं बैठकर सिगरेट पीता हुआ, कड़वी मुस्कान के साथ बताने लगा:

"ज़िंदगी हमारी बहुत बुरी है .. पुराने अध्यक्ष को हटा दिया है, अब मिख़ेई नेस्तेरोव का दामाद हुक्म चलाता है। बस, अपने ढर्रे पर लौटा रहे हैं... कल ज़मीन का बंटवारा कर रहे थे: जैसे ही किसी

ग़रीब के हिस्से अच्छी ज़मीन आती वे फिर से बंटवारा शुरू कर देते। अमीर फिर से हमारी गर्दन पर बैठ रहे हैं... ग्रिगोरी प्यारे, सारी बढ़िया ज़मीनें उन्होंने खुद हथिया लीं। और हमारे हिस्से दुम्मट ज़मीन पड़ी... ये बातें हैं..."

ग्रिगोरी आधी रात तक आग के पास बैठा हुआ मकई के चौड़े-चौड़े पीले पत्तों पर कोयले के टुकड़े से लिखता रहा। उसने ज़मीन के अन्यायपूर्ण बंटवारे के बारे में लिखा, यह भी लिखा कि ढोरों की बीमारी का इलाज जानवरों के डाक्टर से करवाने के बजाय गोलियां चलायीं। लिखावट से भरे मकई के पत्तों का बंडल तीखोन लोहार को थमाते हुए बोला:

"अगर शहर जाना हुआ तो पूछ लेना कि 'क्रास्नया प्राव्दा' अख़बार कहां छपता है। उन्हें यह दे देना... मैंने विस्तार से लिखा है, बस मोड़ना नहीं, नही तो कोयला मिट जायेगा.."

लोहार ने अपनी जली, कोयले से काली उंगलियो से खड़खड़ाती पत्तियों को संभालकर पकड़ा और दिल के पास क़मीज़ के अंदर छिपा लिया। विदा लेते हुए वह उसी मुस्कान के साथ बोला:

"पैदल जाऊंगा शहर, शायद वहा मुझे सोवियत सत्ता मिल जाये.. तीन दिन में मैं डेढ़ सौ वेर्स्ता का रास्ता तय कर लूंगा। एक हफ्ते बाद लौटते ही तुम्हे खबर कर दूगा..."

६

बारिशों और नम कोहरे के साथ पतझड़ का मौसम आ गया था।

दून्या खाने का सामान लाने के लिये सवेरे से गांव गयी हुई थी।

बछडे पहाड़ी की ढलान पर चर रहे थे। ग्रिगोरी कंधों पर चोग़ा डाले उनके पीछे-पीछे चल रहा था, हथेली में वह मुरझायी घास के डंठलो को मसल रहा था। पतझड़ की छोटी सांझ से कुछ पहले टीले से दो घुड़सवार उतरे।

घोड़ों के खुरों की छप-छप सुनायी दी और वे ग्रिगोरी के पास चले आये।

ग्रिगोरी ने उन्हें पहचान लिया। एक अध्यक्ष था – मिखेई नेस्तेरोव का दामाद और दूसरा इग्नात चक्कीवाले का बेटा था।

उनके घोड़े झाग से ढके थे।

"नमस्ते, चरवाहे! "

"नमस्ते! "

"हम तुम्हारे पास आये है "

अध्यक्ष घोडे की जीन पर बैठे-बैठे बडी देर तक अपनी ठड मे ठिठुरी उगलियो से फौजी ग्रेटकोट के बटन खोलता रहा, उसने अखबार का पीला पृष्ठ निकाला और हवा मे उसे खोलकर बोला

"तूने यह लिखा था?"

जमीन के बटवारे, ढोरो की बीमारी के बारे मे मकई के पत्तो से उतरे शब्द ग्रिगोरी की आखो के सामने तैरने लगे।

"चल, हमारे साथ!"

"कहा?"

"यही, घाटी मे एक बात करनी है " अध्यक्ष के नीले होठ फडक रहे थे, आखे इधर-उधर दौड रही थी।

ग्रिगोरी मुस्कराकर बोला "जो कहना है, यही कह दो।"

"यहा भी कह सकते है अगर तू चाहता है "

उसने जेब से पिस्तौल निकाली मचलते घोडे की लगाम खीचते हुए वह फटे स्वर मे चिल्लाया "कमीने अखबारो मे लिखेगा तू?"

"तुम यह क्यो कर रहे हो? "

"इसलिये कि तेरी वजह से मुझ पर मुकदमा चलेगा! चुगली करेगा? बोल, कम्युनिस्ट हरामी! "

उत्तर की प्रतीक्षा किये बिना उसने ग्रिगोरी के बद मुह पर गोली चला दी।

ग्रिगोरी पिछली टागो पर खडे घोडे के नीचे ढह गया, आह भरकर उसने अकडी उगलियो से पीली-नम घास का गुच्छा उखाडा और चिर-निद्रा मे सो गया।

इग्नात चक्कीवाले का बेटा जीन से कूदकर उतरा, उसने मुट्ठी मे काली मिट्टी उठायी और फेनिल खून से भरे मुह मे ठूस दी

स्तेपी तो अपार है, भला कभी किसी ने उसे नापा है। यहा असख्य सडके और पगडडिया बिछी है। पतझड की रात अधेरे से भी काली है और बारिश तो घोडो के खुरो के निशान बिलकुल मिटा देगी।

स्तेपी की सडक है, फुहार पड रही है, झुटपुटा छाया है।

उस राही को चलने मे क्या कठिनाई जिसके कधे पर टगे नन्हे-से झोले मे जौ की रोटी का टुकडा और हाथ मे लाठी है।

दून्या मडक के किनारे-किनारे जा रही है। हवा फटी जाकट के पल्लुओ को फडफडा रही है, पीछे से रुक-रुककर धक्का दे रही है।

चारो ओर बियाबान मनहूस स्तेपी फैली है। अधेरा छाने लगा है।

सडक से कुछ दूर टीला दृष्टिगोचर होता है और उस पर जगली घास के बिखरते छप्परवाली कुटिया।

दून्या शराबियो की तरह लडखडाती हुई धसी कब्र के पास जाती है और औधे मुह उस पर लेट जाती है।

रात घिर आयी है

दून्या सीधे स्टेशन जानेवाले रास्ते पर चलती जा रही है।

उसको चलने मे कोई कठिनाई नही हो रही क्योकि कधे पर लटके झोले मे जौ की रोटी का टुकडा, स्तेपी की कसैली धूल की गध छोडती फटी-पुरानी किताब और भाई ग्रिगोरी की सूती कमीज है।

जब दिल उदासी मे भर जाता है, आसुओ से आखे जलने लगती है, तब वह कही एकात मे, परायी नजरो से छिपाकर झोले से मैली कमीज निकालती है उसे चेहरे से सटा लेती है और भाई के पसीने की सुखद गध को महसूस करती है देर तक वह ऐसे ही पडी रहती है

एक के बाद एक बेस्ती पीछे छूटते जा रहे है। स्तेपी के बीहडो मे भेडियो का चीत्कार सुनायी पड रहा है और दून्या सडक के किनारे-किनारे चली जा रही है, वह शहर जा रही है, जहा सोवियत सत्ता है, जहा सर्वहारा पढते है ताकि अपने जनतत्र का सचालन करना सीख सके।

लेनिन की पुस्तक मे यही कहा गया है।